शोध मंथन Vol. XIV No.II Apr.-June 2023 ISSN: (P) 0976-5255 (e) 2454-339X
Impact Factor 8.870 (SJIF)

डॉ० भीम राव अम्बेडकर के विचारों की प्रासंगिकता समकालीन विश्व के संदर्भ में

प्राप्तिः 16.06.2023
स्वीकृतः 25.06.2023

47

डॉ० एकता चौधरी
असिस्टेंट प्रोफेसर
इस्माईल नेशनल महिला पी०जी० कॉलेज, मेरठ
ईमेलः *ekta259@gmail.com*

सारांश

भारत ऋषियों, मुनियों, संतों एवं महापुरुषों का देश रहा है। हर युग और काल में इन महापुरुषों ने भारत ही नहीं वरन् दुनिया के दूसरे भू–भागों तक ज्ञान, मानवता तथा विश्वबन्धुत्व का संदेश देकर ऐसी अविरल धारा का प्रवाह किया जिससे दुनिया आज भी आलोकित हो रही है। इन्हीं महापुरुषों में बाबा साहेब डॉ० भीम राव अम्बेडकर आधुनिक भारत के ऐसे आधार स्तम्भ हैं, जिनके धर्म–कानून, नैतिक व्यवस्था, शिक्षा, संघबद्धता, संघर्ष, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, मानवाधिकार, सामाजिक न्याय आदि से सम्बन्धित विचार समकालीन विश्व को एक नई दिशा देने में महत्वपूर्ण रूप से प्रासंगिक हैं। डॉ. अम्बेडकर का जन्म परतंत्र भारत में हुआ। इन्होंने मानव तथा मानवता की त्रासदी को नजदीक से देखा तथा अनुभव किया। डॉ० अम्बेडकर न केवल वर्ण–व्यवस्था के सिद्धान्त का गहन अध्ययन किया बल्कि वे इसके अमानवीय एवं घृणित व्यवहार के शिकार भी थे। उनका मानना है कि हमारी जाति व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जो पृथक्ता को बढ़ावा देती है और यह पृथक्ता गुण के रूप में एक मुख्य बाधा है। जातिवाद की परंपराओं तथा धार्मिक अन्धविश्वासों के कारण समाजवाद के मार्ग में बाधायें आती हैं। अतः जब तक वर्ण–व्यवस्था का अन्त नहीं होता तब तक समाजवाद की प्रगति का होना बहुत कठिन है। डॉ० अम्बेडकर ने जाति–व्यवस्था में व्याप्त अस्पृश्यता को एक गम्भीर समस्या बताया और इसे राष्ट्रीय समस्या कहा। समकालीन समाज में व्याप्त रूढियों, अन्धविश्वासों एवं कुरीतियों के निवारण के लिए हिन्दू कोड बिल उपस्थित किया। इन्होंने विवाह की आयु को निर्धारित किया, विवाह विच्छेद, तलाक, दत्तक, सम्पत्ति, उत्तराधिकार जैसे मुद्दों पर ऐसे कानून की स्थापना की जो पूर्णरूपेण समता जो पर आधारित है जो मानवीय अस्तित्व को नया आयाम देता है और उसकी सार्थकता को सिद्ध करता है समाज राज्य और धर्म तीनों के अवांछित बंधनों से शोषित– उत्पीड़ित मानवता को मुक्ति दिलाना ही डॉ० भीमराव आम्बेडकर के विचारों का सतत् लक्ष्य है। भारतीय संस्कृति के युगपुरुष डॉ० अम्बेडकर एक धरोहर हैं जिन्हें राष्ट्ररत्न के नाम से जाना जाता है।

मुख्य शब्द

समकालीन विश्व व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, मानवाधिकार, सामाजिक न्याय, अस्पृश्यता।

भारत ऋषियों, मुनियों, संतों एवं महापुरुषों का देश रहा है। हर युग और काल में इन महापुरुषों ने भारत ही नहीं वरन् दुनिया के दूसरे भू–भागों तक ज्ञान, मानवता तथा विश्वबन्धुत्व का संदेश देकर ऐसी अविरल धारा का प्रवाह किया जिससे दुनिया आज भी आलोकित हो रही है। इन्हीं महापुरुषों में बाबा साहब डॉ० भीम राव अम्बेडकर (1891 ई०–1956 ई०) आधुनिक भारत के ऐसे आधार स्तम्भ हैं. जिनके राष्ट्र, धर्म–कानून, नैतिक व्यवस्था, शिक्षा, संघबद्धता, संघर्ष, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, स्त्री समानता, मानवाधिकार, सामाजिक न्याय आदि से सम्बन्धित विचार समकालीन विश्व को एक नई दिशा देने में महत्वपूर्ण रूप से प्रासंगिक हैं। सन् 1960 के बाद के विश्व को समकालीन माना जाता है। समकालीनता एक प्रवृत्ति है। इसने समाज–स्थिति के बीच तालमेल स्थापित किया। आम आदमी के शोषण, ग्रामीण और नगरीय जीवन–मूल्यों की टकराहट, मानवीय मूल्यों का विघटन और मनुष्य का नैतिक पतन तथा गांवों के बदलते सामाजिक–आर्थिक परिवेश के साथ सहज मानवीय संबंधों के समाप्तप्राय होते जाने की पीड़ा इसमें समाविष्ट है।

मानवता के इतिहास में, राष्ट्रवाद की भावना विघटनकारी तत्व के रूप में भी विद्यमान रही है। इस भावना ने बहुत से राष्ट्रों का अस्तित्व समाप्त किया। साथ ही, अनेक नवीन राष्ट्रों की स्थापना भी की। इस प्रकार राष्ट्रीयता की भावना में दोनों ही कार्य सन्निहित है, अस्तित्व को मिटाना एवं नवीन राष्ट्रों की स्थापना। डॉ० अम्बेडकर के अनुसार, राष्ट्रवाद एक ऐसा तथ्य है जिसको विस्मृत नहीं किया जा सकता और न ही अस्वीकार किया जा सकता है, चाहे कोई व्यक्ति राष्ट्रवाद को अबौद्धिक भावना कहे या वास्तविक भ्रम इसमें एक ऐसी शक्ति निहित है। एक ऐसा गत्यात्मक बल है जिससे अनेक साम्राज्यों को छिन्न–भिन्न किया जा सकता है। राष्ट्रीयता सही है या मानवता के लिए हानिकारक, यह केवल बल देने की भावना पर निर्भर है।[1] डॉ० अम्बेडकर के राष्ट्रवाद से जुड़े विचार समकालीन विश्व में प्रासंगिक हैं।

डॉ० अम्बेडकर वाल्टर वेजहाट द्वारा प्रजातन्त्र की परिभाषा विवेचन द्वारा सरकार तथा अब्राहिम लिंकन द्वारा दी गयी परिभाषा प्रजातन्त्र जनता की, जनता के द्वारा तथा जनता के लिए सरकार है' को अस्वीकार करते हैं। उनके अनुसार, 'प्रजातन्त्र सरकार का एक स्वरूप और प्रणाली है जिसमें लोगों के आर्थिक और सामाजिक जीवन में क्रान्तिकारी परिवर्तन रक्तपात के बिना ही लाये जाते हैं।' इसमें दो शर्तें निहित है, पहली शर्त का सम्बन्ध प्रजातन्त्र के चलाने वालों से और दूसरी का जनता से है। प्रजातन्त्र को चलाने वालों का यह इतना सक्षम बनाती है। कि वे जनता के सामाजिक और आर्थिक जीवन में मूलभूत परिवर्तन ला सकें और बिना रक्तपात के जनता इन परिवर्तनों को स्वीकार करती है।[2] डॉ० अम्बेडकर ने प्रजातन्त्र की सफलता के लिए छः शर्तें बतायी हैं– (1) समाज में स्पष्ट रूप से कोई असमानता न हो, (2) विपक्ष विद्यमान हो, (3) विधि और प्रशासन में समानता, (4) संवैधानिक नैतिकता का पालन, (5) समाज में नैतिक व्यवस्था का संचालन, (6) सार्वजनिक अन्तर्विवेक। डॉ० अम्बेडकर के प्रजातांत्रिक विचार समकालीन विश्व में प्रासंगिक है।

डॉ० अम्बेडकर के अनुसार, कोई धर्म या तो नियमों पर आधारित होता है या सिद्धान्तों पर। नियम व्यावहारिक एवं अभ्यासजनिक कृत्य होते हैं, किन्तु सिद्धान्त बौद्धिक होते हैं। नियम में एक निश्चित कार्य करने के लिए बाध्यता होती हैय किन्तु सिद्धान्त में स्वतन्त्रता होती है। नियम है' का संकेत करता है और सिद्धान्त चाहिए का नियम एवं सिद्धान्त के आधार पर किये गये कर्मों का विषय और रूप भी बदल

जाता है। डॉ० अम्बेडकर कहते हैं कि सिद्धान्त दोषपूर्ण हो सकता हैय किन्तु उस पर आधारित कर्म चेतनायुक्त एवम् उत्तरदायित्वपूर्ण होता है। अतः उत्तरदायित्व को बढ़ावा देने के लिए धर्म को सिद्धान्तों पर आधारित होना चाहिए। जब धर्म नियमों में परिवर्तित हो जाता है तो वह धर्म नहीं रहता हैय क्योंकि उसमें उत्तरदायित्व की भावना का अन्त हो जाता है डॉ० अम्बेडकर के अनुसार हिन्दू धर्म एक 'नियम संहिता' है जिसमे सभी प्रकार के राजनैतिक, आर्थिक एवं सामाजिक नियम मिलते हैं, जिसमें आज्ञाओं एवं निषेधों का समावेश होता है। अतः डॉ० अम्बेडकर इसमें नियमबद्धता एवं पवित्रता के भाव का अन्त करना चाहते थे।[3] डॉ० अम्बेडकर ने कहा कि जहाँ तक मनुष्य की प्रकृति का सम्बन्ध है, गीता में किसी नवीन सिद्धान्त का प्रतिपादन नहीं किया गया है। गीता के लेखक ने सांख्य दर्शन का अनुकरण किया है। सांख्य दर्शन के अनुसार मनुष्य की प्रकृति में तीन गुण– सत्व, रजस और तमस पाये जाते हैं। मनुष्य इन्हीं तीन गुणों का एक मिश्रित रूप है। इन गुणों में निरन्तर परिवर्तन होते रहते हैं। प्रत्येक में एक–दूसरे पर आधिपत्य पाने की प्रक्रिया चलती रहती है। गुणों के इस स्वाभाविक रूप के कारण मनुष्य एवं प्रकृति में अनेक परिवर्तन होते रहते हैं। डॉ० अम्बेडकर के अनुसार, यह कैसे माना जा सकता है कि एक व्यक्ति ने जन्म के समय जिस गुण का बाहुल्य था वह गुण मृत्युपर्यन्त बना रहेगा। इस बात को स्वीकार करने के लिए न तो सांख्य दर्शन में कोई युक्ति है और न हमें व्यवहार में ही यह तथ्य मिलता है। सांख्य दर्शन की यह व्याख्या सिद्ध करती है कि प्रकृति प्रतिक्षण परिवर्तित होती रहती है। प्रत्येक गुण मनुष्य में समय एवं परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं। अतः डॉ० अम्बेडकर कहते हैं कि यदि व्यक्ति की प्रकृति बदलती रहती है तो मनुष्यों को स्थायी वर्गों में बाँटना उसकी प्रकृति के विरूद्ध है। इसलिए मनुष्य को स्थायी व्यवसाय में बाँटना भी अनुचित है। यह व्यवस्था जन–कल्याण में सहायक सिद्ध नहीं हो सकती।[4] डॉ० अम्बेडकर के धार्मिक विचार समकालीन विश्व में प्रासंगिक हैं।

डॉ० अम्बेडकर के व्यक्तित्व में वैज्ञानिक मस्तिष्क और हृदय में मानववादी विचार थे। वह वैज्ञानिक एवं मानववादी मूल्यों के प्रबल समर्थक थे। उनके विचारों में एक ओर वर्णवाद, जातिप्रथा, अस्पृश्यता, असमानता और अन्याय के प्रति विद्रोह मिलता है, तो दूसरी ओर समाज पुनर्रचना के लिए सकारात्मक तत्व भी सन्निहित हैं। उनके सामाजिक विचार कुछ बातों का निषेध करते हैं, तो कुछ सृजनात्मक पक्षों का समर्थन भी करते हैं, ताकि नवीन व्यवस्था की स्थापना का मार्ग प्रशस्त हो सके। डॉ० अम्बेडकर भारतीय समाज, विशेषकर समाज व्यवस्था में, केवल कुछ सुधारों तक सीमित रहना नहीं चाहते थे, बल्कि उसमें वह मौलिक और क्रान्तिकारी परिवर्तन के पक्ष में थे। अपने क्रान्तिकारी सामाजिक चिन्तन में डा० अम्बेडकर ने सर्वप्रथम वर्ण व्यवस्था और उससे फलित विषमताओं एवं बुराइयों का विरोध किया। यह व्यवस्था भले ही गुण–कर्म, श्रम विभाजन, मानव स्वभाव आदि पर आधारित कही गई हो, लेकिन उन्होंने स्पष्टतः कहा, ''मेरे लिए यह चातुर्वर्ण्य जिसमें पुराने नाम जारी रखे गये हैं, घिनौनी वस्तु है, जिससे मेरा पूरा व्यक्तित्व विद्रोह करता है यह चातुर्वर्ण्य सामाजिक संगठन प्रणाली के रूप में अव्यावहारिक, घातक और अत्यन्त असफल रहा है।''[5]

डॉ० अम्बेडकर का जन्म परतंत्र भारत में हुआ। इन्होंने मानव तथा मानवता की त्रासदी को नजदीक से देखा तथा अनुभव किया। डॉ० अम्बेडकर न केवल वर्ण–व्यवस्था के सिद्धान्त का गहन अध्ययन किया बल्कि वे इसके अमानवीय एवं घृणित व्यवहार के शिकार भी थे। उनका मानना है कि हमारी जाति व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जो पृथक्ता को बढ़ावा देती है और यह पृथकता गुण के रूप

में एक मुख्य बाधा है। डॉ० अम्बेडकर के अनुसार, जातिवाद हीन मनोवृत्ति की उपज है। इससे राष्ट्रीयता की जड़ें कमजोर होती है। सामाजिक बुराइयों को बढ़ावा मिलता है और राजनैतिक उच्छृंखलता बढ़ती है।[6] डॉ० अम्बेडकर के अनुसार, हिन्दू जाति व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जो पृथक्ता को बढ़ावा देती है और यह पृथकता गुण के रूप में एक मुख्य बाधा है। भारत में जातिवाद की परंपराओं तथा धार्मिक अन्धविश्वासों के कारण समाजवाद के मार्ग में बाधायें आती हैं। अतः जब तक वर्ण–व्यवस्था का अन्त नहीं होता तब तक समाजवाद की प्रगति का होना बहुत कठिन है। समाजवाद एक ऐसा संघर्ष है जो अमीर और शोषित लोगों के बीच चलता रहता है। यूरोप में भारत की अपेक्षा कहीं अधिक संघर्ष प्रभावशील ढंग से चला, किन्तु यूरोप में गरीबों के पास सेना में भर्ती होने के कारण शारीरिक शक्ति थी तथा उनके मताधिकार में राजनैतिक एवं शिक्षा में नैतिक शक्तियाँ थी। ये तीन प्रगति एवं समृद्धि के साधन यूरोप में अमीरों द्वारा कभी छीने नहीं गये किन्तु भारत में वर्ण–व्यवस्था के कारण ये तीनों अधिकार शूद्रों को नहीं मिल पाये। 'जातिवाद की परंपराओं तथा धार्मिक अन्धविश्वासों के कारण समाजवाद के मार्ग में बाधायें आती हैं। अतः जब तक वर्ण–व्यवस्था का अन्त नहीं होता तब तक समाजवाद की प्रगति का होना बहुत कठिन है।

डॉ० अम्बेडकर ने जाति–व्यवस्था में व्याप्त अस्पृश्यता को एक गम्भीर समस्या बताया और इसे राष्ट्रीय समस्या कहा "अस्पृश्यता में स्वतंत्र सामाजिक व्यवस्था की सभी बुराइयां मिलती हैं। स्वतंत्र सामाजिक व्यवस्था में अस्तित्व का संघर्ष है। जीवित रहने का दायित्व व्यक्ति विशेष पर होता है। यह दायित्व स्वतन्त्र सामाजिक व्यवस्था की सबसे बड़ी बुराई है।[8] डॉ० अम्बेडकर के अनुसार, अस्पृश्यता समाज की कोई क्षणिक या अस्थायी लक्षण नहीं है। यह तो नित्य, शाश्वत, अनन्त तथा स्थायी है। यह संघर्ष कभी न समाप्त होने वाला है, क्योंकि वह धर्म जिसने समाज में दलितों को निम्न स्तर प्रदान कर रखा है। उच्च जाति के कथित हिन्दुओं के अनुसार वह धर्म ही ईश्वरीय, दैवीय पवित्र, नित्य, अनन्त और शाश्वत है। इस संघर्षमय जीवन से मुक्ति पाने का एकमात्र उपाय उन्होंने धर्म–परिवर्तन बतलाया। अतः सन् 1955 में येवला सम्मेलन में विशाल जनसमूह के समक्ष डॉ० अम्बेडकर ने धर्मान्तरण की घोषणा कर दी। उन्होंने कहा, "दुर्भाग्य से मैं अछूत कही जाने वाली हिन्दू जाति में पैदा हुआ हूँ जो मेरे बस की बात नहीं, किन्तु मैं हिन्दु के रूप में नहीं मरूँगा, यह मेरे वश की बात है।" 14 अक्टूबर 1956 को नागपुर में हिन्दु धर्म का परित्याग कर बौद्ध धर्म की दीक्षा ली।[9]

समाज में व्याप्त रूढ़ियों, अन्धविश्वासों एवं कुरीतियों के निवारण के लिए हिन्दू कोड बिल प्रस्तुत किया। इन्होंने विवाह की आयु को निर्धारित किया, पुरूडर विवाह विच्छेद, तलाक, दत्तक, सम्पत्ति, उत्तराधिकार जैसे मुद्दों पर ऐसे कानून की श्री स्थापना की जो पूर्णरूपेण समता पर आधारित हो।

डॉ० अम्बेडकर ने समाज में शोषण एवं दरिद्रता का मूल कारण बेगारी प्रथा को माना है।[10] बेगारी प्रथा से आशय केवल दासों और गुलामों की तरह काम लेना नहीं था अपितु वंशानुगत रूप से जीवन निर्वाह स्तर पर काम लेना भी बेगारी का एक अंश है। बच्चों एवं स्त्रियों में बेगार प्रथा मानवीय तथा सामाजिक अपराध है।

डॉ० अम्बेडकर के अनुसार, स्त्रियों को सम्पत्ति का अधिकार दिये बिना स्वतंत्रता और समानता का अधिकार महत्वहीन है। वे स्वतंत्रता एवं समानता के अधिकारों को व्यापार, व्यवसाय और सम्पत्ति में

ही लागू करना चाहते थे। इसके लिए डॉ० अम्बेडकर विवाह और सम्पत्ति सम्बन्धी कानूनों में परिवर्तन लाना चाहते थे। इसको क्रियाशील करने के लिए उन्होंने हिन्दू कोड बिल प्रस्तुत किया और पुत्री, पत्नी, मीं को पारिवारिक सम्पत्ति पर अधिकार की सिफारिश की। उन्होंने स्त्रियों को सन्तान गोद लिये जाने का अधिकार दिया। डॉ० अम्बेडकर सम्पत्ति के अधिकार को महिलाओं के लिए व्यापक बनाना चाहते थे जिससे तलाक, वैधव्य जैसी स्थितियों में महिलाओं को न तो शोषण का शिकार होना पड़े और न आर्थिक दृष्टि से परावलम्बी होना पड़े।[11] उनके अनुसार, पुरुषों की भाँति स्त्रियों को भी तलाक का अधिकार होता है और तलाकशुदा स्त्री अपने पति से भरण–पोषण का अधिकार रखती है। भरण–पोषण के लिए अपने पति की सम्पत्ति में अधिकार प्राप्त है। डॉ० अम्बेडकर का मानना था कि स्त्री और पुरुष को समान मजदूरी मिलनी चाहिए। जब तक स्त्रियों के मनोबल में वृद्धि नहीं होती, वे स्वयम् अधिकारों के प्रति जागरूक नहीं होती तब तक सम्पत्ति का अधिकार अर्जित करना महिलाओं के लिए कठिन है। डॉ० अम्बेडकर के महिलाओं से जुड़े विचार समकालीन विश्व के लिए प्रासंगिक हैं।

डॉ० भीमराव अम्बेडकर के अनुसार आर्थिक विषमता, आर्थिक निर्भरता और आर्थिक अभाव के कारण अन्याय, असमानता और शोषण को जन्म देती है। आर्थिक असमानता से वर्ग बंटता है। वर्ग विभाजन से अच्छे और बुरे की भावना आती है और इसी से शोषण आरम्भ होता है। सबल, निर्बल का शोषण सदियों से करता आ रहा है, यह प्रकृति का नियम है। समाज, राज्य और धर्म तीनों के अवांछित बंधनों से शोषित– उत्पीड़ित मानवता को मुक्ति दिलाना ही डॉ० भीमराव अम्बेडकर के विचारों का सतत् लक्ष्य है। डॉ० भीमराव अम्बेकर के विचार समकालीन विश्व के लिए प्रासंगिक हैं। भारतीय संस्कृति के युगपुरुष डॉ० अम्बेडकर एक धरोहर हैं जिन्हें राष्ट्ररत्न के नाम से जाना जाता है।

सन्दर्भ

1. अम्बेडकर, डॉ. बी.आर. (1946). पाकिस्तान एण्ड द पार्टीशन ऑफ इण्डिया. पृष्ठ 207.
2. (1976). डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर राइटिंग एण्ड स्पीचेस. भाग 1. बम्बई. पृष्ठ 161.
3. अम्बेडकर, डॉ. बी.आर. एनिहिलिशेन ऑफ कास्ट. पृष्ठ 72–73.
4. अम्बेडकर, डॉ. बी.आर. (1950). बुद्ध एण्ड द फ्यूचर ऑफ हिज रिलीजन. पृष्ठ 11.
5. अम्बेडकर, डॉ. बी.आर. सम्पूर्ण वाङ्मय. खण्ड 1. पृष्ठ 81.
6. अम्बेडकर, डॉ. बी.आर. पाकिस्तान एण्ड दि पार्टीशन ऑफ इण्डिया. पृष्ठ 237–38.
7. अम्बेडकर, डॉ. बी.आर. (1943). मि. गांधी एण्ड द इमैन्सीपेशन ऑफ अन्टचेबिल्स. पृष्ठ 53.
8. अम्बेडकर, डॉ. बी.आर. (1976). राइटिंग एण्ड स्पीचेस. भाग 1. बम्बई. पृष्ठ 161.
9. अम्बेडकर, डॉ. बी.आर. धर्मान्तरण का संकल्प. पृष्ठ 10.
10. अम्बेडकर, डॉ. बी.आर. (1990). राइटिंग एण्ड स्पीचेस. भाग 2. बम्बई. पृष्ठ 533.
11. वही. पृष्ठ 503–07.